मेहनतकशों का पैग़ाम

मेहनतकशों के नाम

मज़दूर मोर्चा

पाक्षिक

Email : mazdoormorcha@yahoo.co.in
www.mazdoormorcha.com

Postal Reg. No. L/H.R/FBD/463-06 /R.N.I. No. 66400/97

पृथला से विधायक टेक चंद को बात करने की फुर्सत नहीं
'हूडा' में पनपते भ्रष्टाचार का एक नमूना 3

हिन्दी, हिन्दू, हिन्दू राष्ट्र
कंगाली का लोकतंत्र 5

क्या मोदी की सत्ता के पराभव का दौर शुरू हो चुका है ?
दहेज भारतीय समाज के लिये अभिशाप है 6

हर अस्पताल चोर, डॉ. पांडे का एसियन सिरमौर इलाज
का नाम, लूट मार का काम, पद्मश्री का इनाम 8

वर्ष 28 अंक 8 फरीदाबाद, रविवार, 1-15 मार्च 2015 फोन : - 9999595632 2 ₹

संसद के भीतर-बाहर राजनीतिक नूरां कुश्ती चलती रहेगी

किसान हारेगा, कार्पोरेट मारेगा

मोदी सरकार के भूमि अधिग्रहण अध्यादेश पर फ़िलहाल चल रही नूरां-कुश्ती का अन्त एक ऐसे समझौते में ही होना है जो देश में किसानी की हार की अनिवार्यता को रेखांकित करने के साथ-साथ कार्पोरेट जगत की मारक क्षमता में वृद्धि का औज़ार भी साबित होगा। मोदी की 'विकास' दृष्टि भी वैसी ही है जैसी उनके विरोधियों की। दोनों के नज़रिये से विकास का मतलब कार्पोरेट की प्राथमिकताओं का समाधान करना है। यहां तक कि सड़क से लेकर जंतर-मंतर तक विरोध के धरने-प्रदर्शन में जुटे समूह भी किसानी को विकास का पहिया बनाने की बात नहीं कर पा रहे हैं। जाहिर है, कार्पोरेट लालच पर सख्ती से क़ानूनी लगाम कसे बिना भूमि अधिग्रहण का कोई भी प्रावधान जनता के हित में नहीं हो सकता।

मज़दूर मोर्चा, दिल्ली ब्यूरो

लगता है राजनीतिक शब्दकोष में कई शब्दों के अर्थ-स्थाई रूप से बदल गये हैं। विकास शब्द का अर्थ हो गया है कार्पोरेट लूट के नये-नये रास्तों को खोलना और उन्हें चौड़े से चौड़ा करना। किसानों की भलाई का मतलब है किसानी की तबाही । रोज़गार के अवसर पैदा करने का तरीका है बसे-बसाये एक आम आदमी को उजाड़ना और उसे विस्थापित करना। आर्थिक सुधार का पैमाना है आम आदमी की बुनियदी जरूरतों को महंगा करना और सार्वजनिक संसाधनों को कार्पोरेट घरानों के हवाले करना। इसी तरह राजनीति का मतलब है चुनाव जीत कर सत्ता की मलाई खाना तथा जंतर-मंतर पर धरने का मतलब हो गया है कि विरोध का ढोल पीटते हुए जनहितों की कीमत पर समझौते करना।

ये सारे नये अर्थ मोदी सरकार के भूमि अधिग्रहण अध्यादेश बनाम कांग्रेस सरकार के भूमि अधिग्रहण कानून की बहस में साक्षात उभर कर सामने आ रहे हैं। पक्ष से विपक्ष तक और संसद से सड़क तक सारी सक्रियता का एकमात्र लक्ष्य है कि कैसे देश के भूमि-संसाधन को बिना रूकावट के कार्पोरेट हाथों में पहुंचाया जाय। अधिक मुआवजा, आम राय, लीज़ व्यवस्था, सीमित अधिग्रहण जैसे सुझाव भी उतने ही कार्पोरेट मंशा को पूरा करने वाले हैं जितने मोदी के 'भगाओ और हथियाओ' वाले भूमि अधिग्रहण अध्यादेश के प्रावधान।

दरअसल अध्यादेश के माध्यम से मोदी ने कार्पोरेट जगत के प्रति अपनी स्वामीभक्ति को दूसरे राजनीतिक दलों/नेताओं के मुकाबले अधि विश्वसनीय सिद्ध करने का ही प्रयास किया है। उनका दावा महज उस कुत्ते के दावे जैसा है जो ज्यादा तेज़ भौंक कर मालिक की शाबाशी हथियाने की आदत से मजबूर है। फ़िलहाल मोदी की यह शोर भाजपा की चुनावी राजनीति के लिये कुछ महंगा सिद्ध हुआ है। लिहाजा, आसार हैं कि वफ़ादारी की भौंक में कुछ कमी की जा सकती है।

यदि वास्तव में भूमि अधिग्रहण को जनता के विकास और किसानों की भलाई का माध्यम बनना है तो सम्बन्धित क़ानून को एकदम नये सिरे से लिखना होगा। यानी कार्पोरेट के नजरिये से नहीं, जनता के नज़रिये से। तब विकास और किसानी परस्पर विरोधी अवधारणायें न रहकर पूरक हो जायेंगे। यानी दूसरे शब्दों में किसानी को ही विकास का क्षेत्र मान लिया जायेगा। यह अपने आप में भारत के देहातों की खुशहाली और वहां बसने वाले करोड़ों किसानों व मज़दूरों के लाभप्रद रोज़गार की गारंटी होगा।

उस हालत में उद्योग और अन्य व्यवसायिक इकाइयां देश की 20 प्रतिशत बंजर पड़ी भूमि पर ले जाई जायेंगी। इससे सही अर्थों में पब्लिक-प्राइवेट पार्टनरशिप सम्पन्न होगी और साथ ही उपेक्षित इलाकों में इन्फ्रास्ट्रकचर भी पहुंचेगा। हालांकि ऐसा तभी संभव है जब सरकारें और तथाकथित विरोधी आन्दोलन निहित स्वार्थों की दलाली से पूरी तरह तौबा कर सकें। क्या यह हो पायेगा ?

आखिर कार्पोरेट को अनाप-शनाप जमीन क्यों चाहिये ? जवाब सीधा है -ऐसा मुफतखोरी का सौदा और कोई नहीं। विकास के नाम पर औने-पौने दामों में मिली ज़मीन को कई गुणा अधिक राशी पर लीज़ कर दो, बैंक में गिरवी रख कर मोटा कर्ज उठा लो और यहां तक कि लैंड यूज़ बदलाव कर रियल एस्टेट में सैंकड़ों गुणा मुनाफ़ा सुनिश्चित कर ले। यह सब कर माफ़ी एवं भारी सरकारी सब्सिडी की सहूलियतों के साथ। जाहिर है अगर कार्पोरेटों को ऊसर-बंजर ज़मीन आबंटित की जाय तो उपरोक्त मुनाफ़ाखोरी अगर पूरी तरह नहीं तो काफ़ी हद तक थम जायेगी।

लिहाज़ा, दिल्ली में फ़िलहाल चल रही नूरां कुश्ती के चरित्र को आंकने का यही पैमाना होना चाहिये। इसका अन्त तभी जनता के हित में कहलायेगा जब वह किसानी के विकास को बढावा देकर ग्रामीण इलाकों में रोज़गाार व खुशहाली पैदा करने वाला सिद्ध हो। अन्यथा आसार वही पुराने हैं कि किसान की हार होगी और कार्पोरेट की मार चलेगी।

खाट खड़ी करने पर उतारू खट्टर

भाजपा ने जब संघ प्रचारक मनोहर लाल खट्टर को हरियाणा में खाट बिछा दी तो किसी को गुमान न रहा होगा कि इतनी जल्दी खाट खड़ी होने के आसार बन जायेंगे। आज प्रदेश में शहरी व्यापारियों और मध्यवर्गीय पंजाबी समुदाय को छोड़कर शायद ही कोई वर्ग हो जो खट्टर सरकार के कारनामों से बुरी तरह ठगा महसूस न कर रहा हो। व्यापारियों और पंजाबी समुदाय का हनीमून भी ज्यादा समय तक खिंच पायेगा, संदेह के घेरे में है।

अव्वल तो आज के हरियाणा में सरकार नाम की कोई चीज़ नज़र ही नहीं आती। इस मामले में खट्टर ने अपने पूर्ववर्ती भूपेन्द्र सिंह हुड्डा के अन्तिम वर्षों के कार्यकाल को भी पीछे छोड़ दिया है। आलम यह है कि सरकारी विभाग अपनी पुरानी गति और दिशाहीनता से बाहर नहीं निकल पा रहे हैं। तमाम वरिष्ठ मंत्री सरकार को अपने-अपने नज़रिये से विपरीत दिशाओं में धकेलने में लगे देखे जा सकते हैं। कोई छापेमारी कर रहा है, कोई बिल्डरों से सांठ-गांठ में जुटा है तो कोई सरकारी पदों को बेच रहा है।

सरकारी घोषणायें मजाक बन कर रह गयी है क्योंकि उन पर अमल कभी होता नहीं। खट्टर का अपना गृहक्षेत्र करनाल हिन्दुस्तान का एकमात्र शहर है जहां के निवासियों को 20 किलोमीटर के फ़ासले पर दो टोल टैक्स नाके लगा कर लूटा जा रहा है। यह ठीक है कि कमीशन रिश्वत और दलाली का पैसा खट्टर की अपनी जेब में नहीं जा रहा, पर उसमें कोई कमी भी नहीं आई है।

जनता से प्रशासनिक रिश्ता बनाने के नाम पर ज़िलास्तर पर मुख्यमंत्री 'सिंगल विंडो' का प्रवधान किया गया, जो महज नाटकबाज़ी साबित हो रही हैं। इस विंडो पर शिकायतें एवं आवेदन तो हर किस्म के आते हैं पर उनमें से ज्यादातर को रद्दी की टोकरी में फेंक दिया जाता है। ऐसा इसलिये क्योंकि खट्टर शासन की नीति के अन्तर्गत केवल चन्द विषयों पर ही जवाब दिये जाते हैं। ये सीमित जवाब भी अब महीनों की देरी से मिलते हैं। यानी 'सिंगल विंडो' भी दूसरी सरकारी खिड़कियों की तरह ही सजावटी वस्तु बन कर रह गयी है।

आज ग्रामीण क्षेत्रों में कितने ही लोग यह कहते मिल जायेंगे कि उन्होंने भाजपा को वोट देकर अपने 5 साल बर्बाद कर लिये। आने वाले समय में यह कोरस बढते जाना है। खट्टर ने मुख्यमंत्री के रूप में जब अपनी पारी की शुरूआत की तो वे पार्टी के विधायकों व कार्यकर्ताओं से कटे हुए थे। एक तरह से उनको थोपा ही गया था। इसकी भरपाई हो सकती थी यदि वे जनता से जुड़ पाते। यहां भी उनकी उपलब्धियां शून्य से आगे नहीं सरक रहीं। लगता है कि अगर यही समीकरण बना रहा तो भाजपा को या तो खट्टर की खाट खड़ी करनी पड़ेगी या स्वयं उसकी अपनी खाट जनता खड़ी कर देगी।

यूरीया खाद भी खट्टर की खाट खड़ी करने में उतनी ही भूमिका अदा करने जा रही है जितनी कि वह गेहूं की फ़सल को बढ़ाने में करती है। खट्टर बार-बार यह कहने से बाज़ नहीं आ रहे कि यूरीया कि प्रदेश में कोई कमी नहीं है। लेकिन किसानों को यह नहीं मिल पा रही। खट्टर के बयान को यदि सही मान लिया जाय तो फ़िर किसान को खाद क्यों नहीं मिल पा रही ? इस मसले पर चर्चा करते हुए आज देहातों में सुना जा सकता है 'और देले मोदे न बोट, ले ले इव स्वाद'।

ख़बर दार

राजगोपाल का चेहरा, अण्णा का मुखौटा

20 फ़रवरी को पी.वी. राजगोपाल के संगठन एकता परिषद के पैदल मार्च को अण्णा हज़ारे ने पलवल से दिल्ली की ओर हरी झण्डी दिखाकर रवाना किया। बताया गया कि यह दिल्ली कूच मोदी द्वारा किसानों की ज़मीन लूटने के लिये लाये जा रहे नये भूमि अधिग्रहण (संशोधन) क़ानून के विरोध में है। इस अवसर पर नर्मदा आंदोलन की जुझारू नेता मेधापाटेकर व कभी अण्णा आन्दोलन से बाहर किए गए स्वामी अग्निवेश के अलावा भाजपा को समय समय पर बिन मांगे सलाह देने वाले गोविंदाचार्य भी मौजूद थे। अण्णा इस बीच स्वयं दिल्ली पहुंचकर जन्तर-मन्तर पर धरने पर बैठ गए।

पैदल मार्च में करीब साढे तीन हज़ार लोग चल रहे थे, जो बिहार, मध्य प्रदेश, राजस्थान, उत्तर प्रदेश आदि प्रदेशों के विभिन्न स्थानों से लाए गए थे। इनमें गरीब, आदिवासी महिलायें, बच्चे, भूमिहीन, भूमिपति सभी शामिल थे। लेकिन पलवल तो क्या पूरे हरियाणा से इस मार्च में कोई नामलेवा तक नहीं दिखाई दिया। जबकि सबसे ज़्यादा इस नये क़नून से नाराजगी दिल्ली, गुड़गांव, नौएडा, आदि शहरों के भूस्वामियों को ही है, जिनकी ज़मीन कम पैसे देकर। और असानी से छीनी जा सकती है।

जो लोग पैदल यात्रा में शामिल थे उनमें से भी इक्का-दुक्का को ही नये भूमि अधिग्रहण क़ानून संशोधन के बारे में पता था और निश्चित रूप से ये इनकी मांग में शामिल नहीं था। पैदल यात्रा में शामिल बहुत सारे लोगों से बातचीत करने पर पता चला कि वे सभी तो उनको दी गयी ज़मीनों के पट्टे देने की मांग के लिये आये थे। आदिवासियों की प्रमुख मांगों में जंगलों का उपयोग करने देने और वन विभाग के कर्मचारियों के उत्पीड़न से निजात की मांग भी शामिल थी।

पी.वी. राजगोपाल द्वारा गठित एकता परिषद् पिछले करीब तीस सालों से विभिन्न प्रदेशों में कार्यरत हैं। निस्संदेह इसमें मध्यप्रदेश और राजस्थान के काफ़ी गांवों में अपनी पैठ बनाई है। संगठन से जुड़नेवाले लगभग सभी लोग अत्यन्त ही गरीब व भूमिहीन हैं। थोड़ी सी संख्या ही ऐसी है जिनके पास नाम मात्र की ज़मीन है। एकता परिषद् अपने आंदोलन को पूरी तरह से अहिंसक व गांधीवादी बताती है। लेकिन इन साढे तीन हज़ार गांधीवादियों को भी मथुरा रोड की एक लाइन घेर कर चलने और इस तरह हज़ारों दूसरे मुसाफ़िरों को परेशान करने में कोई हिंसा नज़र नहीं आई।

न सिर्फ़ पैदल मार्च के समय बल्कि रात के पड़ाव के वक्त भी ये लोग मथुरा रोड पर ही बैठते व सोते हैं जिस कारण से एक ओर की सड़क बन्द रखनी पड़ती है और हज़ारों आम आदमियों को परेशान होना पड़ता है, घंटों तक मीलों लम्बे जाम में फ़ंसा रहना पड़ता है। जबकि ये लोग आराम से मथुरा रोड के साइड में फुटपाथ या कच्ची जगह पर भी चल सकते थे। लेकिन अगर दूसरे लोग परेशान न हों तो खबर कैसे बने। जाहिर है कि अहिंसा से इनका मतलब सिर्फ़ मोदी या किसी भी सरकार को कोई परेशानी न होने देने से है। और इस काम को राजगोपाल ने पूरी निष्ठा से निभाया है।

पिछले दस साल में राजगोपाल महाशय इन ग़रीब लोगों को घेरकर तीसरी बार दिल्ली लाये हैं। पहले 2008 में, फ़िर 2012 में और अब 2015 में। लेकिन उपलब्धि के नाम पर ठन-ठन गोपाल। उनके लोगों ने बताया कि यह सिर्फ़ चेतावनी यात्रा है और अगला मार्च जो दस लाख लोगों का होगा जिस के लिये हर घर से एक रुपया और एक मुट्ठी अनाज प्रति व्यक्ति प्रतिदिन अभी से इकट्ठा करना शुरू कर दिया गया है, वह 2020 में निकाला जायेगा। यानी कि राजगोपाल साहब ने मोदी को तो पूरी तसल्ली दे दी है कि अपने इस शासन काल में तो तुम निश्चिंत हो कर लूटो, अगले पांच साल तक तो इन लोगों को मैं इधर आने नहीं दूंगा। और 2020 में भी क्या फ़ली फ़ोड़नी है जब अभी कुछ नहीं किया। ज़्यादा से ज़्यादा पांच सात दिन और ट्रैफ़िक पुलिस को थोड़ा काम मिल जायेगा और आम आदमी इन अहिंसक गांधीवादियों को गाली देता हुआ ट्रैफ़िक जाम झेलता हुआ चला जायेगा।

इस तरह के आन्दोलन ओर नेता भी सरकारों को खूब माफिक आते हैं। उनके तौर तरीकों को खूब मीडिया में दिखाओ कि देखो कैसे अहिंसक और गांधीवादी लोग हैं कैसे अनुशासनप्रिय हैं आदि। लेकिन उनकी मांगों और लोगों की परेशानियों को गोल कर जाओ। अराजनीतिक आंदोलन चलाने का दम भरने वाले पी.वी. राजगोपाल भी इस तरीके से अपनी तरह की राजनीति नहीं तो और क्या कर रहे हैं।

शेष पेज दो पर